REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 9 | ISSUE - 3 | DECEMBER - 2019

कृषि ऋण व्यवस्था एवं ग्रामीण विकास

डॉ० उमेश कुमार शाक्य
असि० प्रोफेसर -अर्थशास्त्र
माता भगवती देवी राजकीय महिला महाविद्यालय, आँवलखेड़ा, आगरा (उत्तर प्रदेश)

सारांश

भारत में ग्रामीण विकास की दिशा और गति कृषि क्षेत्र पर अत्यधिक निर्भर रही है, जिसमें कृषि ऋण व्यवस्था (Agricultural Credit System) एक केंद्रीय भूमिका निभाती है। कृषि उत्पादन, तकनीकी सुधार, आधुनिक उपकरणों की उपलब्धता, सिंचाई सुविधाओं का विस्तार तथा कृषि-आधारित उद्यमों के विकास में ऋण एक उत्प्रेरक का कार्य करता है। राष्ट्रीयकृत बैंकों, नाबार्ड, सहकारी बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा ऋण वितरण में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, किंतु अनेक ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी ऋण की उपलब्धता, समयबद्धता तथा संरचनात्मक जटिलताओं से संबंधित समस्याएँ बनी हुई हैं। कृषि ऋण में वृद्धि का ग्रामीण परिवारों की आय, कृषि उत्पादकता, रोजगार सृजन तथा ग्रामीण अवसंरचना के विस्तार से प्रत्यक्ष संबंध है। ऋण संसाधनों का असमान वितरण, उच्च ब्याज दर वाले अनौपचारिक स्रोतों की निर्भरता, जटिल ऋण प्रक्रियाएँ तथा परिसंपत्तिकरण की कमी ग्रामीण विकास की गति को सीमित करती हैं।

बीज शब्द (Keyword) : कृषि ऋण, ग्रामीण विकास, संस्थागत वित्त, NABARD, ग्रामीण बैंकिंग, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, कृषि वित्त प्रबंधन, ऋण माफी, कृषि ऋण प्रवाह

भारत मुख्यतः कृषि प्रधान देश है, जहाँ लगभग 48% से अधिक कार्यबल प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि क्षेत्र पर निर्भर है (Economic Survey, 2017–18)। ग्रामीण अर्थव्यवस्था की मजबूती और ग्रामीण परिवारों के सामाजिक-आर्थिक उत्थान में कृषि ऋण व्यवस्था अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

कृषि न केवल खाद्यान्न सुरक्षा प्रदान करती है, बल्कि ग्रामीण रोजगार, ग्रामीण उद्योगों और कृषि-आधारित उद्यमों के विस्तार में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है। ऐसे में कृषि ऋण व्यवस्था का सशक्त एवं प्रभावी होना ग्रामीण विकास की अनिवार्य शर्त है।

भारतीय कृषि प्रणाली पारंपरिक रूप से मानसून पर आधारित रही है, जिसके कारण जोखिम अधिक तथा उत्पादकता अनिश्चित रहती है। इसलिए आधुनिकीकरण के लिए उन्नत तकनीक, उच्च गुणवत्ता वाले बीज, उर्वरक, कृषि यंत्र, सिंचाई सुविधाएँ तथा विपणन अवसंरचना जैसे क्षेत्रों में निवेश की आवश्यकता रहती है। यह निवेश तभी संभव है जब किसानों को सुलभ, पर्याप्त और समय पर ऋण

उपलब्ध हो। इस संदर्भ में नाबार्ड (1982), क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (1975), सहकारी समितियाँ, तथा राष्ट्रीयकृत बैंक कृषि ऋण प्रणाली की रीढ़ के रूप में विकसित हुए हैं।

साहित्य समीक्षा

कृषि ऋण और ग्रामीण विकास से संबंधित उपलब्ध साहित्य यह स्पष्ट करता है कि कृषि वित्त ग्रामीण अर्थव्यवस्था की प्रगति का प्रमुख आधार है। बी. शिवराम (2005) के अनुसार भारत की कृषि संरचना सदैव पूँजी की कमी से ग्रस्त रही है, जिसके कारण संस्थागत ऋण की आवश्यकता निरंतर बनी रहती है। इसी क्रम में भट्टाचार्य (2007) का कहना है कि संस्थागत ऋण का विस्तार किसानों की जोखिम वहन क्षमता को बढ़ाता है और कृषि उत्पादकता में स्थायी वृद्धि सुनिश्चित करता है।

नाबार्ड (वार्षिक रिपोर्ट, 2005–2016) के विभिन्न अध्ययनों से ज्ञात होता है कि किसान क्रेडिट कार्ड (KCC) योजना ने अल्पकालिक ऋण प्रवाह को व्यापक बनाया है और छोटे किसानों को औपचारिक बैंकिंग प्रणाली से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हालांकि कई रिपोर्टों में यह भी उल्लेख है कि ऋण सीमा, दस्तावेजीकरण की जटिलता, और ऋण वितरण में समयबद्धता की कमी अब भी चुनौती बनी हुई है। विश्व बैंक (2008) ने कृषि-आधारित अर्थव्यवस्थाओं में ऋण आपूर्ति को ग्रामीण विकास के लिए अनिवार्य माना है। रिपोर्ट के अनुसार ऋण पर आधारित निवेश से कृषि आय बढ़ती है, गैर-कृषि ग्रामीण उद्यमों का विकास होता है तथा ग्रामीण रोजगार सृजन में तीव्रता आती है। इसी प्रकार गोपालन और अवस्थी (2010) ने अपने अध्ययन में पाया कि कृषि ऋण उन परिवारों में आर्थिक स्थिरता का स्रोत बनता है जहाँ फसल जोखिम अधिक होता है।

वर्मा (2011) के अनुसार सहकारी बैंक ग्रामीण क्षेत्रों में सबसे सुलभ और स्थानीय वित्तीय संस्थान हैं, लेकिन पूँजी की कमी, प्रबंधन की कमजोरियाँ तथा राजनीतिक हस्तक्षेप इनके प्रभाव को सीमित करते हैं। वहीं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों (RRBs) पर किए गए कुमार और राव (2013) के अध्ययन में पाया गया कि इन बैंकों ने प्राथमिकता क्षेत्र ऋण के माध्यम से ऋण पहुँच में सुधार किया है, परंतु ग्रामीण क्षेत्रों में उनकी शाखा घनत्व और क्रेडिट डिमांड में असंतुलन देखा गया।

रमेश और सिंह (2015) के अनुसार कृषि ऋण वितरण और ग्रामीण विकास के सूचकों — जैसे आय, रोजगार, कृषि उत्पादकता तथा ग्रामीण अवसंरचना — के बीच सकारात्मक संबंध पाया गया। हालांकि देव (2016) ने चेतावनी दी कि ऋण वितरण में क्षेत्रीय असमानताएँ ग्रामीण विकास की गति को बाधित करती हैं, विशेषकर पूर्वी भारत में जहाँ संस्थागत ऋण की पहुँच अभी भी सीमित है।

उपरोक्त साहित्य से यह निष्कर्ष निकलता है कि कृषि ऋण ग्रामीण विकास की रीढ़ है, परंतु ऋण वितरण की संरचना, पहुँच, संस्थागत सीमाएँ और ऋण लागत जैसी समस्याएँ अभी भी सुधार की मांग करती हैं। इसी आधार पर वर्तमान अध्ययन कृषि ऋण व्यवस्था के गहन विश्लेषण एवं ग्रामीण विकास के साथ इसके संबंध को स्पष्ट करने का प्रयास करता है।

शोध विधि

इस शोध अध्ययन में वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्तियों का प्रयोग किया गया है एवं भारतीय रिज़र्व बैंक, नाबार्ड, कृषि मंत्रालय, आर्थिक सर्वेक्षण-विभिन्न वर्ष, विश्व बैंक (World Development Reports), सहकारी समितियों तथा RRBs की वार्षिक रिपोर्ट आदि से प्राप्त **द्वितीयक आँकड़ों** आंकड़ों का प्रयोग किया गया है तथा प्रतिशत विश्लेषण, ट्रेंड विश्लेषण, तुलनात्मक अध्ययन तकनीक का प्रयोग किया गया है।

डेटा विश्लेषण

इस अध्ययन में 2005–2018 के बीच कृषि ऋण प्रवाह एवं ग्रामीण विकास सूचकों का विश्लेषण किया गया है जो कि निम्नवत है -

भारत में कृषि ऋण प्रवाह (2005–2018)*(₹ लाख करोड़ में)*

वर्ष	कुल कृषि ऋण	वार्षिक वृद्धि (%)
2005	1.25	—
2008	2.79	18.4
2010	4.46	17.1
2013	7.30	15.5
2015	8.77	12.4
2018	11.68	14.2

स्रोत : RBI PSL Reports 2008, 2011, 2018, RBI, Handbook of Statistics on Indian Economy (2006), RBI Annual Report (2014), RBI Trends and Progress of Banking (2016)

शोधपत्र में प्रस्तुत तालिका कृषि ऋण व्यवस्था की वास्तविक स्थिति और ग्रामीण विकास पर इसके प्रभाव को स्पष्ट करती हैं। कृषि ऋण प्रवाह की प्रवृत्ति यह स्पष्ट है कि भारत में कृषि ऋण में लगातार वृद्धि हुई है। 2005 में ₹1.25 लाख करोड़ का कुल कृषि ऋण 2018 तक बढ़कर "11.68 लाख करोड़ हो गया। यह वृद्धि मात्रात्मक ही नहीं बल्कि ऋण नीति में संरचनात्मक परिवर्तनों का भी संकेत देती है—जैसे कि प्राथमिकता क्षेत्र ऋण (Priority Sector Lending), किसान क्रेडिट कार्ड योजना, और वित्तीय समावेशन कार्यक्रम। इस वृद्धि से ग्रामीण बैंकिंग प्रणाली की सक्रियता, किसानों की ऋण मांग में वृद्धि, तथा कृषि आधारित अर्थव्यवस्था के विस्तार का अनुमान लगाया जा सकता है।

संस्थागत ऋण बनाम अनौपचारिक ऋण (ग्रामीण किसान – 2013 NSSO)

ऋण स्रोत	प्रतिशत (%)
बैंक	42
सहकारी संस्थाएँ	12
साहूकार	26
व्यापारी/अन्य	20

स्रोत : NSSO (2013), NSSO, 70th Round (2013)

संस्थागत बनाम अनौपचारिक ऋण का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत है। NSSO के अनुसार बैंक और सहकारी समितियाँ कुल मिलाकर लगभग 54% ऋण प्रदान करती हैं, जबकि 46% ऋण अनौपचारिक स्रोतों से आता है। यह अनुपात दर्शाता है कि अभी भी ग्रामीण किसान बड़ी संख्या में साहूकार और व्यापारियों पर निर्भर हैं। इसका कारण ऋण की समय पर उपलब्धता, दस्तावेजों की सरलता, और त्वरित नकद आवश्यकता है।

यह स्थिति ग्रामीण ऋण व्यवस्था की कमजोरियों को उजागर करती है, विशेषकर वित्तीय समावेशन की दृष्टि से।

KCC जारी संख्या और ऋण प्रवाह (2005–2018)

वर्ष	KCC जारी (करोड़)	KCC ऋण प्रवाह (₹ लाख करोड़)
2005	4.30	0.82
2010	5.70	1.78
2015	6.90	2.67
2018	7.65	3.10

स्रोत : NABARD Status Report (2006), NABARD Report (2011,2016, 2018)

तालिका में KCC जारी संख्या और ऋण प्रवाह का विवरण दर्शाता है कि 2005 से 2018 तक KCC जारी संख्या 4.30 करोड़ से बढ़कर 7.65 करोड़ हो गई। यह वृद्धि अल्पकालिक ऋण की उपलब्धता में सुधार का संकेत है। KCC ने फसल बीज, कीटनाशक, खाद, सिंचाई आदि जैसे कृषि कार्यों हेतु ऋण को सुलभ बनाया। हालांकि, KCC की बढ़ती संख्या के बावजूद कुछ राज्यों में किसानों की जागरूकता एवं दस्तावेजीकरण की समस्याओं के कारण इसके उपयोग में कमी देखी गई।

इन तालिकाओं का संयुक्त विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि भारत में कृषि ऋण प्रणाली में सुधार हुआ है, लेकिन ऋण पहुँच की असमानता, अनौपचारिक ऋण का प्रभाव, और संस्थागत ऋण प्रक्रियाओं की जटिलता ग्रामीण विकास की गति को सीमित कर रही है।

समस्याएँ/चुनौतियाँ

भारत में कृषि ऋण व्यवस्था ग्रामीण विकास का प्रमुख आधार है, किंतु इसके संचालन में अनेक संरचनात्मक, संस्थागत, सामाजिक और आर्थिक समस्याएँ मौजूद हैं, जो ऋण प्रवाह, ऋण उपयोग और ऋण पुनर्भुगतान को प्रभावित करती हैं। इन चुनौतियों का विस्तृत विश्लेषण निम्नानुसार है:

1. ऋण की अपर्याप्त उपलब्धता एवं पहुंच

ग्रामीण क्षेत्रों में कई किसान अभी भी संस्थागत ऋण तक नहीं पहुँच पाते। छोटे और सीमांत किसान ऋण के प्रमुख पात्र होने के बावजूद शाखा-घनत्व की कमी, बैंकिंग नेटवर्क की सीमाएँ और क्रेडिट एसेसमेंट की समस्याओं के कारण ऋण नहीं प्राप्त कर पाते। ग्रामीण क्षेत्रों में बैंक शाखाओं का विस्तार अपेक्षाकृत धीमा रहा है, जिससे ऋण वितरण का लाभ सभी तक नहीं पहुँच पाता।

2. दस्तावेजीकरण और प्रक्रिया की जटिलताएँ

कृषि ऋण प्राप्त करने के लिए आवश्यक दस्तावेज, भूमि रिकॉर्ड, आधार/पहचान पत्र, भूमि स्वामित्व प्रमाणित दस्तावेज आदि कई किसानों के पास उपलब्ध नहीं होते। कई राज्यों में भूमि रिकॉर्ड अभी भी अधूरे या पुराने हैं, जिससे बैंक ऋण स्वीकार करने में संकोच करते हैं। इससे किसान अनौपचारिक ऋण स्रोतों पर निर्भर हो जाते हैं।

3. अनौपचारिक ऋण स्रोतों पर निर्भरता

साहूकार, व्यापारी और सूदखोर ग्रामीण भारत में अभी भी सक्रिय हैं। NSSO के अनुसार 46% ऋण अनौपचारिक स्रोतों से आता है। इन स्रोतों में ब्याज दरें अत्यधिक होती हैं (अक्सर 24–60% तक), जिससे किसान कर्ज-जाल में फँस जाते हैं। बैंक भले ही कम ब्याज लेकर ऋण देते हों, लेकिन प्रक्रिया की जटिलता किसानों को अनौपचारिक स्रोतों की ओर ले जाती है।

4. ऋण वितरण में क्षेत्रीय असमानताएँ

कुछ राज्यों—जैसे पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र—में प्रति किसान ऋण उच्च है, जबकि पूर्वी भारत (बिहार, उड़ीसा, झारखंड, पूर्वोत्तर) में ऋण की उपलब्धता बहुत कम है। यह असमानता ग्रामीण विकास में क्षेत्रीय असंतुलन पैदा करती है। जहां ऋण अधिक है, वहाँ कृषि उत्पादकता, आय और रोजगार के अवसर भी अधिक हैं।

5. गिरवी (Collateral) से संबंधित समस्याएँ

बैंक ऋण देने के लिए अक्सर जमीन या अन्य संपत्ति गिरवी रखने की मांग करते हैं, लेकिन सीमांत किसान या भूमिहीन मजदूरों के पास गिरवी रखने योग्य संपत्ति नहीं होती। इससे संस्थागत ऋण तक पहुँच सीमित हो जाती है।

6. ऋण का दुरुपयोग एवं उत्पादक निवेश में कमी

कई अध्ययन बताते हैं कि किसानों द्वारा प्राप्त ऋण का एक हिस्सा गैर-कृषि खर्चों में उपयोग हो जाता है, जैसे सामाजिक कार्य, स्वास्थ्य, शिक्षा, विवाह या उपभोग खर्च। इससे ऋण का उत्पादक निवेश कम हो जाता है और ऋण चुकाने में कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं।

7. बैंकिंग संरचना में कमजोरियाँ

सहकारी समितियाँ पूँजी की कमी और प्रबंधन की कमजोरियों से जूझ रही हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (RRB) कई क्षेत्रों में घाटे में हैं। कई राष्ट्रीयकृत बैंक प्राथमिकता क्षेत्र ऋण को बोझ समझते हैं। इस कारण कृषि ऋण वितरण के लक्ष्यों को पूरा करने में कठिनाई आती है।

8. फसल-जोखिम और प्राकृतिक आपदा का खतरा

कृषि जोखिमों विफलता, कीट आक्रमण, फसल रोग, बाढ़, सूखा) के कारण ऋण वापसी पर अनिश्चितता रहती है। कई किसानों की फसल नष्ट होने पर वे ऋण चुका नहीं पाते, जिससे एनपीए (NPA) बढ़ता है। बैंक भी कृषि ऋण देने में सतर्क हो जाते हैं।

9. जागरूकता एवं वित्तीय साक्षरता की कमी

कई किसान बैंकिंग उत्पादों, योजनाओं, KCC लाभ, ब्याज दरों या सब्सिडी के बारे में जानकारी नहीं रखते। यह ज्ञान-अंतर ऋण के प्रभावी उपयोग में बाधा डालता है।

सुझाव/उपाय

भारत की कृषि ऋण व्यवस्था में सुधार ग्रामीण विकास की गति को तेज करने के लिए आवश्यक है। प्रस्तुत विश्लेषण के आधार पर निम्नलिखित व्यावहारिक एवं नीति-उन्मुख सुझाव दिए जा रहे हैं, जो ऋण प्राप्ति, वितरण, उपयोग और पुनर्भुगतान की प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बना सकते हैं।

1. ऋण उपलब्धता का विस्तार एवं शाखा नेटवर्क का सुदृढ़ीकरण

ग्रामीण क्षेत्रों में बैंक शाखाओं की कमी ऋण वितरण की सबसे बड़ी बाधा है। इसलिए आवश्यक है कि बैंकिंग नेटवर्क का विस्तार किया जाए, विशेषकर उन क्षेत्रों में जहाँ प्रति किसान ऋण कम है — जैसे पूर्वी और उत्तर-पूर्वी भारत। मोबाइल बैंकिंग वैन, ग्रामीण बैंकिंग कॉरस्पोंडेंट, डिजिटल बैंकिंग तथा माइक्रो-एटीएम के माध्यम से वित्तीय सेवाओं को अंतिम व्यक्ति तक पहुँचाया जा सकता है।

2. दस्तावेजीकरण में सरलता और भूमि अभिलेखों का डिजिटलीकरण

कई किसानों के पास भूमि रिकॉर्ड और स्वामित्व प्रमाण अधूरे होने के कारण ऋण प्राप्ति कठिन हो जाती है। सरकार को भूमि अभिलेखों के पूर्ण डिजिटलीकरण और अद्यतन (Updating) पर ध्यान देना चाहिए ताकि बैंक महज भूमि संख्या (Khasra/Khatoni) के आधार पर ऋण स्वीकृत कर सकें। दस्तावेजों की संख्या कम की जानी चाहिए तथा किसानों के लिए "Single Window Credit Clearance System" लागू किया जाना चाहिए।

3. KCC (किसान क्रेडिट कार्ड) योजना का सुधार और विस्तार

KCC किसानों के लिए सबसे लोकप्रिय ऋण साधन है, परंतु इसका उपयोग कुछ क्षेत्रों में सीमित है। इसके लिए—नए KCC जारी करने की प्रक्रिया सरल की जाए, ब्याज सब्सिडी को समय पर उपलब्ध कराया जाए, KCC को कृषि के साथ-साथ पशुपालन, मत्स्य, डेयरी गतिविधियों से भी जोड़ा जाए , मोबाइल ऐप के माध्यम से KCC सीमा, ब्याज दर और पुनर्भुगतान की जानकारी उपलब्ध कराई जाए इससे अल्पकालिक ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित होगी और किसानों की अनौपचारिक स्रोतों पर निर्भरता घटेगी।

4. सहकारी समितियों और RRBs का पुनर्गठन

सहकारी बैंक और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक ग्रामीण वित्तीय ढाँचे की रीढ़ हैं। इनके पुनर्गठन के लिए—प्रबंधन को पेशेवर बनाया जाए, पूँजी आधार (Capital Base) बढ़ाया जाए, तकनीकी अवसंरचना (जैसे CBS बैंकिंग) को मजबूत किया जाए, ऋण वितरण के लक्ष्यों को स्थानीय मांग से जोड़ा जाए। इससे ऋण प्रवाह में स्थिरता और पारदर्शिता आएगी।

5. अनौपचारिक ऋण स्रोतों पर निर्भरता कम करने हेतु उपाय

साहूकारों पर निर्भरता कम करने के लिए आवश्यक है कि बैंक ऋण को अधिक सुलभ, तेज और कम दस्तावेजी बनाया जाए । इसके अतिरिक्त—SHG–Bank Linkage Programme का विस्तार, महिला स्वयं सहायता समूहों को माइक्रो-क्रेडिट उपलब्ध कराना, ग्राम स्तर पर क्रेडिट काउंसलिंग सेंटर की स्थापना आदि किसानों को औपचारिक ऋण स्रोतों से जोड़ने में सहायक होगा।

6. कृषि जोखिम प्रबंधन और फसल बीमा का विस्तार

किसान ऋण तभी लेते हैं जब उन्हें जोखिम कम दिखाई देता है। इसलिए—फसल बीमा योजनाओं को सरल और पारदर्शी बनाया जाए, दावों (Claims) के भुगतान में विलंब को कम किया जाए, मौसम आधारित बीमा (WBCIS) को अधिक जिलों में लागू किया जाए, ड्रोन आधारित फसल क्षति आकलन जैसी तकनीकों का उपयोग किया जाए, इससे किसान ऋण लेने में अधिक सुरक्षित महसूस करेंगे।

7. ऋण उपयोग में सुधार: वित्तीय साक्षरता का प्रसार

किसानों को ऋण का उचित उपयोग, ब्याज दर, पुनर्भुगतान अवधि, सब्सिडी और निवेश के बारे में जागरूक करना आवश्यक है । इसके लिए—ग्राम पंचायत स्तर पर वित्तीय साक्षरता कार्यक्रम, रेडियो/टीवी/मोबाइल के माध्यम से कृषि जानकारी, बैंक द्वारा नियमित परामर्श शिविर किसानों की क्षमता बढ़ाने में सहायक होंगे।

8. कृषि आधारित उद्यमशीलता को बढ़ावा

कृषि ऋण केवल फसल उत्पादन तक सीमित न रहे, बल्कि इससे कृषि-आधारित उद्यमों — जैसे दुग्ध उत्पादन, मत्स्य, मशरूम उत्पादन, खाद्य-प्रसंस्करण — को भी ऋण उपलब्ध कराया जाए । इससे ग्रामीण क्षेत्रों में- रोजगार बढ़ेगा, गैर-कृषि आय के स्रोत विकसित होंगे एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था अधिक संतुलित होगी।

9. क्षेत्रीय असमानताएँ दूर करने हेतु विशेष योजनाएँ

पूर्वी भारत, पहाड़ी क्षेत्र, वंचित जिलों के लिए विशेष कृषि ऋण पैकेज प्रदान किए जाएँ। ब्याज दर में छूट, प्राथमिकता क्षेत्र ऋण सीमा बढ़ाना, नाबार्ड द्वारा विशेष कोष (Special Fund) से असमानताओं को कम किया जा सकता है।

10. तकनीकी सुधार और डिजिटल क्रेडिट सिस्टम

डिजिटल प्लेटफॉर्म—जैसे आधार आधारित e-KYC, मोबाइल बैंकिंग, UPI आधारित भुगतान — किसानों के लिए ऋण प्रक्रिया को सरल बनाते हैं। डिजिटल क्रेडिट इतिहास (Digital Credit Profile) तैयार करने से किसान का पूर्व ऋण रिकॉर्ड देखकर तुरंत ऋण स्वीकृत किया जा सकता है।

निष्कर्ष

भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार कृषि है तथा कृषि ऋण व्यवस्था इस आधार को मजबूत करने का प्रमुख स्तंभ है। ग्रामीण विकास का व्यापक ढाँचा तभी प्रभावी हो सकता है जब कृषि क्षेत्र में पर्याप्त, सुलभ और उत्पादक ऋण प्रवाह सुनिश्चित किया जाए। प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि कृषि ऋण न केवल किसानों की पूँजीगत आवश्यकताओं को पूरा करता है, बल्कि कृषि निवेश, उत्पादकता वृद्धि, तकनीकी अपनाव, फसल विविधीकरण तथा ग्रामीण रोजगार सृजन में महत्वपूर्ण योगदान देता है । संस्थागत ऋण किसानों को साहूकारों के शोषण से बचाता है और उन्हें औपचारिक वित्तीय प्रणाली से जोड़ता है, जिससे उनकी आर्थिक सुरक्षा एवं सामाजिक प्रतिष्ठा भी मजबूत होती है।

कृषि ऋण व्यवस्था के विस्तार ने भारत में ग्रामीण विकास की दिशा को सकारात्मक रूप से प्रभावित किया है, परंतु इसकी प्रगति अनेक चुनौतियों से घिरी है। ऋण वितरण में क्षेत्रीय असमानता, छोटे एवं सीमांत किसानों की सीमित पहुँच, अनौपचारिक ऋण पर निर्भरता, ऋण का गैर-उत्पादक उपयोग तथा प्राकृतिक

जोखिम जैसे कारकों ने ऋण व्यवस्था के वास्तविक प्रभाव को कम किया है। इसके साथ ही वित्तीय साक्षरता की कमी, ऋण माफी की राजनीति, बढ़ते NPAs, और बीमा प्रणाली की कमजोरियाँ कृषि ऋण के सुचारु प्रवाह में अवरोध उत्पन्न करती हैं। इन चुनौतियों के कारण ग्रामीण विकास के लक्ष्यों की प्राप्ति की गति अपेक्षाकृत धीमी रहती है।

अध्ययन से यह भी सामने आया कि अनेक क्षेत्रों में ऋण का उपयोग कृषि उत्पादन बढ़ाने हेतु किया जाता है, पर कई बार किसानों को प्राप्त धनराशि गैर-उत्पादक कार्यों की ओर भी स्थानांतरित हो जाती है, जिससे कृषि निवेश की दक्षता घटती है। यह स्थिति दर्शाती है कि ऋण प्राप्ति के साथ-साथ उसके उपयोग की निगरानी तथा वित्तीय साक्षरता की आवश्यकता अत्यधिक है। इसके अलावा, प्राकृतिक आपदाओं तथा बाजार अस्थिरता से प्रभावित किसानों की ऋण चुकौती क्षमता कमजोर हो जाती है, जिसका सीधा प्रभाव बैंकिंग प्रणाली तथा ऋण प्रवाह पर पड़ता है।

ग्रामीण विकास तभी संभव है जब कृषि निवेश में वृद्धि हो, किसानों को तकनीकी साधनों का उपयोग सुलभ हो तथा फसल उत्पादन में स्थिरता आए। ऋण प्रणाली इस लक्ष्य में केन्द्रीय भूमिका निभाती है, परंतु इसके लिए संस्थागत ढाँचे को और मजबूत करना होगा। बैंकिंग अवसंरचना का विस्तार, ग्रामीण क्षेत्रों में शाखाओं और डिजिटल बैंकिंग सुविधाओं की उपलब्धता, सस्ती ऋण दरों का निर्धारण, और सरल दस्तावेजी प्रावधान किसानों को औपचारिक वित्तीय प्रणाली से बड़े पैमाने पर जोड़ने में सहायक होंगे। साथ ही, फसल बीमा योजनाओं की पारदर्शिता, समय पर दावा भुगतान, और जोखिम प्रबंधन के उन्नत तरीकों का प्रयोग किसानों की ऋण-सुरक्षा को बढ़ाएगा।

ग्रामीण विकास केवल ऋण उपलब्धता पर निर्भर नहीं करता, बल्कि अवसंरचना, विपणन व्यवस्था, सिंचाई तंत्र, प्रसंस्करण उद्योग तथा कृषि तकनीक के प्रसार से भी गहराई से जुड़ा है। जब तक इन क्षेत्रों में समग्र विकास नहीं होगा, तब तक ऋण का प्रभाव संपूर्ण रूप से दिखाई नहीं देगा। अतः सरकार, बैंकों, NABARD, सहकारी समितियों और अन्य वित्तीय संस्थानों को समन्वित रूप से कार्य करने की आवश्यकता है।

यदि कृषि ऋण का प्रवाह न्यायसंगत, पारदर्शी और लक्ष्य-उन्मुख बने, तो इससे कृषि क्षेत्र की उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि होगी। छोटे और सीमांत किसानों के लिए विशेष प्रावधान तथा सामाजिक-आर्थिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों में प्राथमिकता आधारित ऋण नीति लागू करना ग्रामीण समृद्धि के लिए अत्यंत आवश्यक कदम होंगे। इसके साथ ही, डिजिटल वित्तीय सेवाओं, ई-नेशनल एग्रीकल्चर मार्केट (e-NAM), आधार-आधारित भुगतान और मोबाइल बैंकिंग की पहुँच बढ़ाकर ऋण वितरण प्रणाली को अधिक कुशल और विश्वसनीय बनाया जा सकता है।

सार रूप में कहा जाए, तो कृषि ऋण व्यवस्था ग्रामीण विकास का एक अपरिहार्य घटक है। यह न केवल उत्पादन बढ़ाती है, बल्कि कृषि क्षेत्र में स्थिरता, सुरक्षा और आत्मनिर्भरता प्रदान करती है। यदि पहचानी गई चुनौतियों का समाधान प्राथमिकता के साथ किया जाए, तो कृषि ऋण व्यवस्था ग्रामीण भारत में आर्थिक परिवर्तन का सबसे मजबूत साधन बन सकती है। इस शोध का निष्कर्ष यह स्पष्ट करता है कि एक सुदृढ़, समावेशी और पारदर्शी ऋण प्रणाली ही ग्रामीण विकास की वास्तविक नींव को मजबूत कर सकती है, और भारत को कृषि-प्रधान अर्थव्यवस्था से कृषि-समृद्ध अर्थव्यवस्था की ओर ले जा सकती है।

संदर्भ (References)

1. Ahluwalia, M. S. (2017). *Economic reforms in India since 1991: Has gradualism worked?* Oxford University Press.

2. Basu, K., & Maertens, A. (Eds.). (2012). *The New Oxford Companion to Economics in India*. Oxford University Press.
3. Bhalla, G. S., & Singh, G. (2009). *Economic liberalisation and Indian agriculture: A state-wise analysis*. SAGE Publications.
4. Chand, R. (2012). *Development policies and agricultural markets*. Economic and Political Weekly, 47(52), 53–63.
5. Government of India. (2018). *Agricultural Statistics at a Glance*. Ministry of Agriculture & Farmers Welfare. http://agricoop.nic.in
6. Government of India. (2017). *Doubling Farmers' Income Report*. Committee on Doubling Farmers Income, Ministry of Agriculture. https://agricoop.nic.in/doubling-farmers-income
7. Kumar, P., Joshi, P. K., & Birthal, P. S. (2009). *Agricultural diversification in India: Patterns, determinants, and policy implications*. Agricultural Economics Research Review, 22(2), 225–236.
8. Mishra, S. (2014). *Farmers' suicides in India: A review*. Indira Gandhi Institute of Development Research Working Paper. http://www.igidr.ac.in
9. Mohan, R. (2006). *Agricultural credit in India: Status, issues and future agenda*. Reserve Bank of India Bulletin, 60(11), 1–16.
10. NABARD. (2017). *Annual Report 2016–17*. National Bank for Agriculture and Rural Development. https://www.nabard.org
11. NABARD. (2018). *Status of Microfinance in India: 2017–18*. National Bank for Agriculture and Rural Development. https://www.nabard.org
12. NITI Aayog. (2018). *Agriculture & Allied Sectors Report*. Government of India. https://niti.gov.in
13. Planning Commission. (2013). *Twelfth Five Year Plan (2012–17)*, Volume II. SAGE Publications.
14. Rangarajan, C., & Padhi, R. (2017). *Issues in agricultural credit*. Reserve Bank of India Occasional Papers, 38(1–2), 1–20.
15. Reserve Bank of India. (2016). *Report of the Internal Working Group on Agriculture Credit*. RBI. https://rbi.org.in
16. Reserve Bank of India. (2017). *Handbook of Statistics on the Indian Economy*. RBI. https://rbi.org.in
17. Reserve Bank of India. (2018). *Report on Trend and Progress of Banking in India*. RBI. https://rbi.org.in
18. Sharma, V. P. (2011). *Agriculture credit in India: Performance and determinants*. Indian Institute of Management Ahmedabad Working Paper. https://iima.ac.in
19. Singh, S., & Sukhpal (2010). *Institutional credit and agricultural development in India*. Punjab University Journal of Economics, 2(1), 55–72.
20. World Bank. (2014). *India: Rural Economy and Agriculture Report*. World Bank Publications. https://worldbank.org
21. World Bank. (2018). *World Development Indicators*. World Bank. https://data.worldbank.org